प्रवेश मानते हैं. वे नारी को संपत्ति का अधिकार न देने, नारी को शासन के पदों से दूर रखने, आर्यों द्वारा पुत्रोत्पत्ति की कामना करने आदि के पीछे के कारणों को जानने का प्रयास करते हैं तथा उन्होंने कई बातों का स्पष्टीकरण भी दिया है. उदाहरण के लिये उनके अनुसार महिलाओं को सम्पत्ति का अधिकार न देने का कारण यह है कि उनमें लड़ाकू क्षमता का अभाव होता है, जो कि सम्पत्ति की रक्षा के लिये आवश्यक होता है. इस प्रकार अल्टेकर ने उन अनेक बातों में भारतीय संस्कृति का पक्ष लिया है, जिसके लिये हमारी संस्कृति की आलोचना की जाती है. उन्होंने अपनी पुस्तक के प्रथम संस्करण की भूमिका में स्वयं यह स्वीकार किया है कि निष्पक्ष रहने के प्रयासों के पश्चात् भी वे कहीं-कहीं प्राचीन संस्कृति के पक्ष में हो गये हैं." प्रसिद्ध राष्ट्रवादी इतिहासकार आर. सी. दत्त ने भी अल्तेकर के दृष्टिकोण का समर्थन किया है उनके अनुसार, "महिलाओं को पूरी तरह अलग-अलग रखना और उन पर पाबन्दियाँ लगाना हिन्दू परम्परा नहीं थी. मुसलमानों के आने तक यह बातें बिल्कुल अजनबी थीं... .महिलाओं को ऐसी श्रेष्ठ स्थिति हिन्दुओं के अलावा और किसी प्राचीन राष्ट्र में नहीं दी गयी थी."[शकुन्तला राव शास्त्री ने अपनी पुस्तक 'वूमेन इन सेक्रेड लॉज़' में इसी प्रकार के निष्कर्ष प्रस्तुत किये हैं.

आधुनिक काल के प्रमुख नारीवादी इतिहासकारों तथा विचारकों ने अल्टेकर और शास्त्री के उपर्युक्त स्पष्टीकरणों की आलोचना की है. आर.सी. दत्त के विरोध में प्रसिद्ध नारीवादी विचारक डा. उमा चक्रवर्ती कहती हैं, "... ... मनु तथा अन्य कानून-निर्माताओं ने लड़कियों की कम उम्र में ही शादी की हिमायत की थी. सातवीं सदी में हर्षवर्धन के प्राम्भिक काल से संबंधित विवरणों में सती-प्रथा उच्च जति की महिलाओं के साथ साफ़ जुड़ी देखी जा सकती है. महिलाओं का अधीनीकरण सुनिश्चित करने वाली संस्थाओं का ढाँचा अपने मूलरूप में मुस्लिम धर्म के उदय से भी काफ़ी पहले अस्तित्व में आ चुका था. इस्लाम के अनुयायियों का आना तो इन तमाम उत्पीड़क कुरीतियों को वैधता देने के लिये एक आसान बहाना भर है."

नारीवादी विचारकों ने यह माना है कि प्राचीन भारत में नारी की स्थिति में ह्रास का कारण हिन्दू समाज की पितृसत्तात्मक संरचना थी न कि कोई बाहरी कारण. इसके लिये नारीवादी विचारक प्रमुख दोष स्मृतियों के नारी-सम्बन्धी नकारात्मक प्रावधानों को देते हैं, क्योंकि तत्कालीन समाज में स्मृतिग्रन्थ सामाजिक आचारसंहिता के रूप में मान्य थे और उनमें लिखी बातों का जनजीवन पर व्यापक प्रभाव था. प्रमुख स्मृतियों में नारी-शिक्षा पर रोक, उनका कम उम्र में विवाह करने सम्बन्धी प्रावधान, उनको सम्पत्ति में समान अधिकार न देना आदि प्रावधानों के कारण समाज में स्त्रियों की स्थिति में अवनति होती गयी. नारीवादी विचारकों के अनुसार हमें अपनी कमियों का स्पष्टीकरण देने के स्थान पर उनको स्वीकार करना चाहिये ताकि वर्तमान में नारी की दशा में सुधार लाने के उपाय ढूँढ़े जा सकें.

इवेंजीलवादियों तथा उपयोगितावादियों द्वारा महिला प्रश्न के आधार पर की गयी भारतीय सभ्यता की आलोचना पर प्राच्यवादियों तथा राष्ट्रवादियों व सुधारकों ने इस आलोचना पर विभिन्न प्रतिक्रियाएं दी हैं, जिसमें उन्होंने मुख्यत: यह तर्क रखा है कि भारत के सुनहरे युग में महिलाओं की स्थिति उच्च थी। इन प्राच्यवादियों तथा राष्ट्रवादी प्रतिक्रियाओं पर समकालीन नारीवादी इतिहासकारों में उमा चक्रवर्ती ने अपनी तीखी आलोचना के जरिए प्राच्यवादियों तथा राष्ट्रवादियों के तर्कों को नकार दिया।

नारीवादी इतिहासकार बताती कि भारतीय महिलाओं के सुनहरे युग की संकल्पना निर्मित (Constructed) है, जिसे 19वी सदी की राजनीति में निर्मित किया गया था। इतिहास की इस निर्मिति पर इन्होंने कई आधार पर सवाल उठायें। उन्होंने तर्क दिया कि "जिन स्रोतों का राष्ट्रवादी इतिहासकारों ने प्रयोग किया, वह मुख्यत: ब्राह्मणवादी स्रोत थे। यह भारतीय इतिहास की आधी अधूरी समझ देते हैं"। **उमा चक्रवर्ती** यह तर्क देती हैं कि राष्ट्रवादी यह प्रस्तुत करते हैं कि वैदिक युग में महिलाओं कि स्थिति उच्च थी, जबकि ऐसा करते हुए वह सिर्फ आर्य महिलाओं (उच्च जाति की अभिजनवादी महिलाएँ) की बात कर रहे होते हैं क्योंकि वैदिक काल में ही गैर आर्य महिलाएं (वैदिक दासी) उस समय भी शोषित की जाती थी। इसलिए आर्यन महिलाओं की स्थिति को भारतीय (हिंदू) स्त्रीत्व दिखाने की कोशिश गलत है। वैदिक काल में भी साधारण नारी की वहीं स्थिति थी, जैसी वर्तमान साधारण नारी की है। सिर्फ गार्गी और मैत्रेयी जैसी कुछ उच्च जाति की महिलाओं के प्रस्तुतीकरण से सभी महिलाओं की स्थिति का अंदाजा लगाना निरर्थक है। यह इतिहास को गलत रूप से प्रस्तुत करने का तरीका मात्र है, जिससे यह तथ्य छिपाया जा सके कि उस समय भी महिलाएँ समाज से गायब थीं (चक्रवर्ती:1989:28)। उन गायब महिलाओं का क्या हुआ? जिनका ज़िक्र भी नहीं किया गया, उन स्त्रियों का क्या हुआ जिन्हें आर्यों ने दासी बनाया हुआ था। इस बारे में यह प्रस्तुतीकरण मौन दिखायी पड़ता है।

उमा चक्रवर्ती तर्क देती हैं कि गार्गी और याज्ञवल्क्य के मध्य हुए प्रसिद्ध वाद विवाद प्रसंग को आधार बनाकर स्त्री-शिक्षा की उपलब्धता को ख़ुशी से प्रचारित किया जाता हैं तथा इस सन्दर्भ को एक महत्वपूर्ण उदाहरण के रूप में देखा जाता हैं कि वैदिक काल में स्त्रियों को शिक्षा लेने की अनुमति थी। लेकिन इस कहानी में एक ऐसा समय भी आता हैं, "जब याज्ञवल्क्य द्वारा सभी पुरुष विद्वानों को पराजित कर दिए जाने के पश्चात जब गार्गी ही एकमात्र प्रतियोगी बचती हैं तथा बड़ी ही कुशलता से बहस करती हुई आगे बढ़ती हैं, अपने प्रश्नों की धार तेज़ करती जाती हैं, तब अंतत: अपनी हार से बचने के लिए याज्ञवल्क्य ब्राहाणवादी पुरुषत्व का सहारा लेते हुए उसे धमकी देते हैं.... जिसके बाद गार्गी चुप हो जाती हैं" (चक्रवर्ती:2011:29)। इस चुप्पी के साथ ही गार्गी वाद-विवाद में पराजित सिद्ध हो जाती हैं। इस प्रसंग से यह स्पष्ट हो जाता हैं कि याज्ञवल्क्य गार्गी को अपने शक्तिशाली तर्कों के आधार पर नहीं बल्कि वह उसे उस भय के कारण वाद विवाद में धमकाता हैं, जिससे वह ज्यादा प्रश्न न उठा सके और याज्ञवल्क्य का सिर मात्र एक स्त्री के कारण सभी के समक्ष नीचा न हो जाये।

अत: समकालीन नारीवादी तर्क देते हैं कि "राष्ट्रवादी जिस स्वर्ण युग कि चर्चा कर रहे थे, वह वास्तव में निर्मित था, जो मुख्यतः 19वी सदी के उपनिवेशवाद और राष्ट्रवाद के अंतर्सम्बन्धों का परिणाम था"। वह दोनों ही भारतीय स्त्री को अपने अपने अनुसार प्रयोग करना चाहते थें, न कि उन स्त्रियों का सुधार करना चाहते थें। 19वी सदी में महिला प्रश्न की भारत में महिलाओं की स्थिति में सुधार सामाजिक प्रगति और आधुनिकता का प्रतीक चिन्ह बन गया था। ऐसी स्थिति में विचारो का यह जाल बुनना आवश्यक हो गया था, जिससे उन्हें सभ्यता व आधुनिकता का समर्थक तथा महिलाओं की स्थिति में सुधार का हितैषी माना जाएं।

राष्ट्रवादी विचारक यह मानते हैं कि वैदिक-युग में भारत में नारी को उच्च-स्थिति प्राप्त थी. नारी की स्थिति में विभिन्न बाह्य कारणों से ह्रास हुआ. परिवर्तित परिस्थितियों के कारण ही नारी पर विभिन्न बन्धन लगा दिये गये जो कि उस युग में अपरिहार्य थे. इसी प्रकार वर्ण-व्यवस्था को भी कर्म पर आधारित और बाद के काल की अपेक्षा लचीला बताते हुये ये विचारक उसका बचाव करते हैं. नारीवादी विचारक राष्ट्रवादी दृष्टिकोण का विरोध करते हैं. उनके अनुसार तत्कालीन सामाजिक ढाँचा पितृसत्तात्मक था और धर्मगुरुओं ने जानबूझकर नारी की अधीनता की स्थिति को बनाये रखा. ये विचारक यह भी नहीं मानते कि वैदिक युग में स्त्रियों की बहुत अच्छी थी, हाँ स्मृतिकाल से अच्छी थी, इस बात पर सहमत हैं. दलित विचारक स्मृतियों और विशेषत मनुस्मृति के कटु आलोचक हैं. वे यह मानते हैं कि शूद्रों की युगों-युगों की दासता इन्हीं स्मृतियों के विविध प्रावधानों का परिणाम है. वे मनुस्मृति के प्रथम अध्याय के ३१वेंऔर ९१वें श्लोक का मुख्यतः विरोध करते हैं जिनमें क्रमशः शूद्रों की ब्रह्मा की जंघा से उत्पत्ति तथा सभी वर्णों की सेवा शूद्रों का कर्त्तव्य बताया गया है. प्राचीन भारत में नारी की स्थिति के विषय में सबसे अधिक विस्तार से वर्णन राष्ट्रवादी विचारक ए.एस. अल्टेकर ने अपनी पुस्तक में किया है. उन्होंने नारी की शिक्षा, विवाह तथा विवाह-विच्छेद, गृहस्थ जीवन, विधवा की स्थिति, नारी का सार्वजनिक जीवन, धार्मिक जीवन, सम्पत्ति के अधिकार, नारी का पहनावा और रहन-सहन, नारी के प्रति सामान्य दृष्टिकोण आदि पर प्रकाश डाला है. अल्टेकर के अनुसार प्राचीन भारत में वैदिक काल में स्त्रियों की स्थिति समाज और परिवार में उच्च थी, परन्तु पश्चातवर्ती काल में कई कारणों से उसकी स्थिति में ह्रास होता गया. परिवार के भीतर नारी की स्थिति में अवनति का प्रमुख कारण अल्टेकर अनार्य स्त्रियों का

स्वदेशी महिला शिक्षिका (Native women teacher).

रमाबाई अपने समय की महिलाओं से अलग, स्त्री-उत्थान में भागिता और राष्ट्र द्वारा नवनिर्मित दृति से दूर

* २२ वर्ष की उम्र में रमाबाई कोलकाता पहुँची। उन्होंने बाल-विधवाओं और विधवाओं की दयनीय स्थिति सुधारने का बीड़ा उठाया
* उनके संस्कृत ज्ञान और भाषणों से बंगालसमाज में हलचल मच गई।
* भाई की मृत्यु के बाद 'विपिन बिहार' नामक अछूत जाति के वकील से विवाह, इस वजह से कट्टरपंथियों का सामना।
* पूना आकर स्त्री शिक्षा का काम शुरु
* आर्य महिला समाज की संस्थापना
* 1883 में इंग्लैंड गई, इसाई धर्म में परिवर्तित, रमाबाई
  एसोसिएशन का निर्माण; विधवाओं के लिए चंदा जमा।
* शारदा सदन, कृपा सदन आश्रम का निर्माण
* आश्रमों में अनाथ, पीड़ित महिलाओं की शिक्षा।

रमाबाई ने स्त्री के समान अधिकारों की बात की और सिर्फ पुरुष की सहचारिणी, सहभागी और motivator बन कर नहीं रही।

* रमाबाई ने रुकमाबाई केस की अगुवाई की। घटना 1884 की है। दादाजी भीकाजी नामक व्यक्ति ने अदालत में वैवाहिक अधिकारों के प्रतिष्ठापन का दावा दायर किया। इस मामले में दादाजी भीकाजी ने अपनी पत्नी रुकमाबाई पर आरोप लगाया कि बचपन में विवाह के पश्चात उसने शिक्षा प्राप्त कर ली जिसके परिणामस्वरूप अब वह उसके साथ रहने को तैयार नहीं है। दादाजी भीकाजी जिला अदालत में मुकदमा हार गया। उसने इस फैसले के विरुद्ध बंबई हाईकोर्ट में अपील की। प्रतिवादियों ने जिला न्यायालय के निर्णय के विरुद्ध उग्र अभियान चलाते हुए कहा कि 'विदेशी शासकों' को हिन्दु रीति-रिवाजों में हस्तक्षेप करने का कोई अधिकार नहीं है। वह मुकदमा जीत गए और रुकमाबाई को उनके साथ रहने जाने का आदेश दिया गया। जिसे रुकमाबाई ने मानने से इंकार कर दिया।

रमाबाई ने इस केस की पैरवी की तथा रुकमाबाई को न्याय दिलाने की कोशिश की। जो नाकामयाब रही। पर वह निरंतर बालविवाह, वैवाहिक अधिकार और उनमें संशोधनों के लिए न्यायालयों में अपील दायर कर बदलावों की ओर लोगों को प्रेरित करती रही।

महिला प्रश्न पर रमाबाई के विचार

रमाबाई प्रथम महिला थी जिन्होंने इस बात पर बल दिया कि महिलाओं को ज्ञान के अधिकार व विकास के अवसरों से वंचित रखना न केवल पुरुषों बल्कि, समाज को अवनति की ओर ले जाता है। रमाबाई के अनुसार पुरुषों ने महिलाओं को ज्ञान प्राप्ति से वंचित किया हुआ है ताकि महिलाओं पर उनका नियंत्रण, उनकी अनियंत्रित स्वतन्त्रता, व्यवहार व समाज में सर्वोच्च स्थान बना रहे और अपने इसी उद्देश्य के प्रचार के लिए उन्होंने धर्मशास्त्रों का निर्माण किया जो यह कहते हैं कि महिलाओं को शास्त्रों के अध्ययन का कोई अधिकार नहीं है। उन्हें अपने पति के साथ सेवक की भांति रहना चाहिए और पति की सेवा से उन्हें मुक्ति प्राप्त हो सकती है।

1907 में प्रकाशित A Testimony में रमाबाई यह वर्णन करती है कि महिलाओं के प्रति भेदभाव हिंदुवादी दर्शन में आंतरिक रूप से ही निहित है: "दो बातों पर सभी धर्मशास्त्र पवित्र धार्मिक ग्रंथ, पुराण और आधुनिक कवि और आज के लोकप्रिय उपदेशक और उच्च जाति के लोग सहमत हैं कि उच्च जाति तथा निम्न जाति कि औरतें एक वर्ग के रूप में बुरी ही नहीं, बहुत बुरी है और राक्षसों से भी गयी-गुजरी है और झूठ की तरह अपवित्र है और पुरुषों को जो मोक्ष प्राप्ति की सुविधा प्राप्त है उसे पाने के योग्य नहीं है।"

रमाबाई देव भाषा संस्कृत में शिक्षित अपने समय की अकेली स्त्री थी जिसने अपनी पहचान तत्कालीन बुद्धिजीवियों के बीच बड़े संघर्ष से बनाई थी, हिन्दु धर्म के मूल को विशुद्ध रूप से पुरुषवादी कहकर निंदा की। वास्तव में रमाबाई के अनुसार, ईश्वर ने महिला व पुरुष को एक-दूसरे से भिन्न इसलिए बनाया है ताकि वह एक-दूसरे के पूरक बन सकें। साथ ही महिलाओं की वर्तमान स्थिति में परिवर्तन के लिए सबसे महत्वपूर्ण शिक्षा है जो उन्हें आत्म निर्भर बनाएगा।

रमाबाई महिलाओं की अवस्था व हिन्दु राष्ट्र की स्थिति में सीधा संबंध देखती थी। उनके अनुसार महिलाएं एक मां के रूप में राष्ट्र निर्माता है और एक मां की शारीरिक व मानसिक स्थिति निश्चित रूप से उसकी संतान व राष्ट्र के भविष्य को प्रभावित करेगा अतः हिन्दू राष्ट्र की उन्नति व अवनति महिलाओं की अवस्था पर निर्भर करता है और भारत राष्ट्र की अवनति का कारण भारतीय नारीयों का पूर्ण परावलम्बन और अज्ञानता है। रमाबाई के अनुसार महिलाओं की स्थिति में सुधार के लिए तीन बातें अत्यधिक आवश्यक है — आत्मविश्वास (self-reliance), शिक्षा (education),

राष्ट्रवादियों द्वारा निर्मित की स्त्री के नई छवि के अनुरू[प] सरला देवी का जीवन रहा। वे योद्धा स्त्री के गुणों से ओतप्रोत रही। पर उनके प्रयासों में स्त्री की भागीदारी राष्ट्र हित के लिए सीमित और पुरुष को प्रोत्साहित करने तथा पूर्ण सहयोग करने तक ही सीमि[त] थी। स्त्री अधिकारों, उसके शोषण के विरुद्ध आंदोलन सिर्फ राष्ट्रवाद को बढ़ाने मात्र का अंश था।

सरला देवी

सरला देवी रवींद्रनाथ टैगोर की बड़ी बहन 'स्वर्ण कुमारी' की बेटी थीं। स्नातक की परीक्षा उत्तीर्ण करने के बाद सरला देवी ने बंगाल के सुप्रसिद्ध पत्र 'भारती' का सम्पादन कार्य संभाला। वर्ष 1905 ई. के कांग्रेस के ऐतिहासिक 'बनारस अधिवेशन' में उन्होंने भाग लिया एवं पहली बार 'वन्दे मातरम्' का घोष किया था। तभी से यह नारा भारतीय क्रांतिकारियों का युद्ध घोष बन गया।

* सरला देवी ने लोकमान्य बाल गंगाधर तिलक द्वारा महाराष्ट्र में आयोजित 'गणपति' एवं 'शिवाजी' उत्सवों की तरह बंगाल में भी दो उत्सव प्रारंभ किए थे। पंजाब में सरला देवी ने उर्दू एवं अंग्रेजी भाषा के दो पत्रो [sic] का सम्पादन किया।

* 1919 ई. में "रौलट एक्ट" का विरोध करने पर सरला देवी के पति को आजीवन कारावास हो गया, परंतु जन-सामान्य में लोकप्रिय सरला को गिरफ़्तार करने का साहस अंग्रेज सरकार न कर सकी। पति की गिरफ़्तारी के बाद वे गुप्त रूप से क्रांतिकारियों की मदद करती रहीं। सरला देवी बीसवीं सदी के दूसरे एवं तीसरे दशकों में बंगाल और पंजाब के क्रांतिकारियों के बीच की महत्त्वपूर्ण कड़ी बन गई थीं।

* सरला देवी बंगाल में पुनरुत्थान आंदोलन में गहराई से जुड़ी हुई थी। उनका स्पष्ट मत था कि वे मैकाले द्वारा प्रचारित इस ऐतिहासिक मिथक को तोड़कर रहेंगी कि बंगाली एक डरपोक कौम है।

* सन् 1902 में उन्होंने नौजवानों को प्रत्यापारित्य व्रत रखने, आत्मरक्षा के लिए तलवारबाजी, कुश्ती, मुक्केबाजी का प्रशिक्षण लेने की प्रेरणा दी।

* 1903 में उदयादित्य [sic] व्रत या वीराष्टमी व्रत शुरू किये। बाद में उन्होंने दुर्गा पूजा के दूसरे दिन शारीरिक वीरता के लिए आयोजित होनेवाली परेड का स्वरूप ग्रहण किया।

* इन सब गतिविधियों के पीछे सरला देवी की असली मंशा ~~एक [illegible]~~ राष्ट्रीय आजादी के लिए योद्धा तैयार करना था।